जागरण कानपुर 7-11-83

अरब जगत

साम्यवाद का भविष्य क्या?

आज विश्व में पुनः शीत युद्ध की ज्वालाएं देखने में आ रही हैं। इसका प्रमुख कारण विश्व की दोनों महाशक्तियों— अमेरिका तथा रूस के मध्य बढ़ती पारस्परिक प्रतिद्वंदिता है। जहां तक रूस का प्रश्न है, वह साम्यवादी दलों के माध्यम से विश्व के विविध देशों में अपना प्रभाव बढ़ाना चाहता है। दूसरी ओर, अमेरिका 'प्रजातंत्र' की सरक्षा के नाम पर इसका कड़ा विरोध करता है और इसमें धन एवं हथियारों का प्रयोग खुली तौर पर करता है।

आजकल 'साम्यवाद' और समाजवाद' एक दूसरे का पर्यायवाची माना जाने लगा है। उदाहरण के लिए, संसार का सबसे बड़ा साम्यवादी देश, सोवियत यूनियन अपने को 'सोवियत समाजवादी गणतंत्र' का संघ कहता है। समाज वादी जर्मनी भी अपने को 'जर्मनी प्रजातांत्रिक गणतंत्र' कहता है। भारत के संविधान के प्रस्तावना में भी समाजवादी शब्द जुड़ गया है। कैसा भी समाजवाद हो, उसके जन्मदाता तो कार्ल मार्क्स ही माने जायेंगे। चीन में माओ ने अपने ढंग की एक अलग साम्यवादी सरकार की स्थापना की, परन्तु वह केवल चीन तक ही सीमित रही। आज विकसित देशों में भी समाजवाद का प्रभाव है। फ्रांस के वर्तमान समाजवादी मित्रेरां समाजवादी दल के हैं, इटली में हुए चुनावों में भी समाजवादी दल को भारी विजय मिली है।

सोवियत यूनियन और अमरीका की आपसी खींचतान— प्रत्यक्षतः— सबसे अधिक अरब देशों में देखने को मिलती है। सोवियत रूस अमरीका को पूंजीवादी कहकर संसार में उसका सबसे बड़ा प्रतिद्वंदी बना हुआ है। इसी प्रतिद्वंदिता ने शीत युद्ध जैसी स्थिति ला दी है। रूस का एकमात्र उद्देश्य है कि ज्यादा से ज्यादा देशों को किसी प्रकार साम्यवादी खेमें में शामिल किया जाये। स्पष्टतया, अमेरिका उसकी यह इच्छा पूर्ण नहीं होने देना चाहता।

अधिकांश अरब देशों में साम्यवाद की लहर अभी तक संगठित आंदोलन के रूप में नहीं उभरी है। कुछ देशों में गुप्त रूप से साम्यवादी गतिविधियों के कई ब्यौरे मिले हैं। लेकिन इन गतिविधियों को देखकर आश्चर्य होता है, क्योंकि अरब जगत में एक भी देश नहीं है, जहां के शासक और जनता 'साम्यवाद' के नाम से भी दूर न रहना चाहती हो। यमन को इस मामले में एकदम अपवाद कहा जाना चाहिए। वहां जनवादी प्रजातांत्रिक गणतंत्र (पी. डी. आर. वाई.) नामक साम्यवादी दल सत्तारूढ़ है। लेकिन, इसके अतिरिक्त, खुमैनी के ईरान में साम्यवादी तुदे दल, खाड़ी के लगभग सभी देशों में सोवियत प्रभाव और यहां तक कि भारतीय उपमहाद्वीप में अफगानिस्तान में रूसी सेना की ओर से आंखें नहीं मूंदी जा सकती। तेल निर्यातक देशों का तो सबसे बड़ा हथियार है, तेल। ये देश बड़े विकसित देशों से अपनी बात मनवाने का सबसे बड़ा अस्त्र तेल को ही मानते हैं। किन्तु ऐसे देशों में सोवियत रूस नहीं आता, क्योंकि इसके पास आवश्यकता से अधिक तेल है।

अरब राष्ट्रवादियों में हाल में 'अरब समाजवादी' नामक एक नया दल उभरा है। उसका उद्देश्य रूस के 'वैज्ञानिक समाजवाद' के स्थान पर 'इस्लामी समाजवाद' को लाना है। उसकी मान्यता है कि हम अपने देश की उन्नति चाहते हैं। लेकिन, इस्लामी पद्धति से। वह मार्क्सवाद को स्वीकार करते हैं पर रूस के इशारे पर चलना नहीं चाहता। स्पष्ट है कि इस्लाम की जड़ में भी अब मार्क्सवाद घुस गया है।

सीरिया में सन १९४२ में साम्यवादी दल की स्थापना हुई। फ्रांसीसी साम्यवादी दल के प्रयास से सोवियत रूस में प्रशिक्षित एक कुर्द (जिसने कई वर्ष निष्कासन में बिताये थे) उसका नेता बना। खालिद बक्दाश नामक इस व्यक्ति का नाम साम्यवादी खेमें में काफी अरसे से लिया जाता है। वर्ष १९६३ में अरब समाजवादी पुनर्जागरण के तत्वाधान में बांध नामक एक दल सत्ता में आया। इस दल के शासकों ने खालिद बक्दाश और इसके दल (सीरियाई साम्यवादी दल (एस. सी. पी.)) को निर्मूल करने की कोशिश की, क्योंकि उसे सबसे बड़ा खतरा उसी दल से था। फरवरी १९६६ में स्थिति बदल गई। बांध दल का वामपंथी मोर्चा अचानक सत्ता में आया जिसने खालिद बक्दास का समर्थन आवश्यक समझा। वर्ष १९७० के अंत तक तो एकदम परिवर्तन ही हो गया। उसने बांध दल को बराबरी का दर्जा देकर इस दल के दो व्यक्तियों को अपने मंत्रिमंडल में शामिल किया। असाद ने सोवियत र सोवियत रूस से मैत्री करना आवश्यक समझा, क्योंकि बगल में अमरीका समर्थित इजरायल और मिस्र दोनों से ही उसे खतरा था। सन १९७३ में हाफिज असाद और खालिद बक्दास ने मिलकर 'राष्ट्रीय प्रगतिशील फ्रंट' नामक संयुक्त मोर्चा बनाया। ऐसा रूस को प्रभावित करने के लिए (असाद द्वारा) किया गया था। अक्टूबर, १९८० में सीरिया ने रूस के साथ मैत्री संधि भी कर ली।

इराक का साम्यवादी दल, पहली बार मोहम्मद अजीज के नेतृत्व में अस्तित्व में आया। मोहम्मद अजीज को बांध दल से सहयोग मिलता रहा है। अजीज का प्रभाव न केवल जनता में वरन सेना में भी था। सन १९७० के अंत में जब इराक के तत्कालीन राष्ट्रपति ने सेना से साम्यवादियों को बाहर करना आरम्भ किया, तब सोवियत रूस को अप्रत्यक्ष रूप से हस्तक्षेप करना पड़ा। अफगान शासक दाउद की हत्या के बाद इराक के कान खड़े हुए और उसने सोवियत रूस से मैत्री की। हाल में भी वर्तमान राष्ट्रपति सद्दाम हुसेन मास्को की यात्रा से लौटे हैं। दिसंबर १९७९ में काबुल में सोवियत सेना के प्रवेश का भी उन्होंने विरोध किया। ईरान के साथ उनकी लड़ाई चल रही है। इजराइल ने जब इराक के तेल कुओं पर हमला किया, तब अमरीका के भय से उन्होंने मोहम्मद अजीज को आश्वासन दिया कि वे रूस से मित्रता को किसी भी देश से ज्यादा आवश्यक समझते हैं।

सूडान के साम्यवादी दल को अरब जगत में सबसे अधिक सुसंगठित और सबसे बड़ा कहा जा सकता है। उसमें व्यावसायिक बुद्धिजीवी और ट्रेड यूनियनों के नेतागण शामिल हैं। सन १९६९ में इस दल ने जफार नुमेरी को सत्ता हथियाने में मदद की और सरकार में भी हिस्सा लिया। सन १९७१ के आते—आते साम्यवादी दल के मंसूबे बढ़ गये। जुलाई में राष्ट्रपति नुमेरी को अपदस्थ करने का प्रयास किया गया। संयोगवश, राष्ट्रपति को इनकी चाल का पता पहले ही चल गया और बड़ी चुस्ती से इन्होंने साम्यवादी षड़यंत्र को नाकामयाब करने में सफलता प्राप्त की। दल की गतिविधियों पर कड़ी पाबंदी लगा दी गई। अब साम्यवादी दल यहां भूमिगत हो गया है।

लेबनन के साम्यवादी दल के नेता, निकोला शावी अपने को खुलेआम मार्क्सवादी कहते हैं। उन्होंने कई बार सार्वजनिक सभाओं में मध्य-पूर्व में रूसी नीति का समर्थन किया है। अब तक फिलिस्तीनी गुरिल्ले यहां रह रहे थे, तो उनके बीच निकोला शावी की काफी धाक थी। फिलिस्तीनी मुक्ति संगठन के गुरिल्ले स्वयं तो लड़ाकू थे ही, सीरिया की सेना के मौजूद रहने से इन्हें और भी बल मिलता था।

गुरिल्लों को मिलाकर एक बार शावी ने 'अल अन्सार' नामक फिलिस्तीनी मुक्ति (साम्यवादी) संगठन की स्थापना का असफल प्रयास भी किया। लेबनान जैसी जगह में किसी एक दल का उभरना संभव नहीं है क्योंकि अर्से से यह अशांत क्षेत्र बना हुआ है।

सऊदी अरब में सन १९७५ में साम्यवादी दल की स्थापना हुई इसके नेतागण अंतर्राष्ट्रीय साम्यवादी अधिवेशनों में बराबर जाया करते हैं। लेकिन देश के अन्दर इनका प्रभाव अन्य अरब देशों की तुलना में कम है।

कुल १४ वर्ष पुराना मोरक्को का साम्यवादी दल, और समाजवादी संगठन के नाम से विख्यात हैं। यह इतना सोवियत समर्थक हैं कि एक भी कदम बिना रूसी नेताओं से पूछे नहीं उठाता। इसके नेतागण दल को एक व्यापक राष्ट्रीय संगठन के रूप में स्थापित करने में लगे हैं, ताकि एक ही बार संपूर्ण देश का शासन उसके हाथों में आ जाए।

तुनिसिया के साम्यवादी दल को जुलाई, १९८१ में कानूनी मान्यता प्राप्त हुई है। राष्ट्रपति हबीब बुर्गुइबा के नारकीय आदेश के साथ, जिसमें उन्होंने दल के गुप्त कार्यालय 'अल तारिक अल अवीद' को अपने सभी प्रकाशन खुले रूप में प्रकाशित करने और बेंचने की अनुमति दे दी।

सोवियत रूस की मुख्य नीति है, अधिक से अधिक देशों में साम्यवादी दल को अस्तित्व में लाकर उसे इस प्रकार सबल बनाया जाये कि वह शासन की बागडोर अपने हाथ में ले सकें। विरोधी दल के रूप में बने रहना रूस को गंवारा नहीं। रूस को अब विश्वास हो गया है कि कट्टर इस्लामी शासन प्रणाली वाले देशों में साम्यवादी दल को ताकतवर बनने में काफी समय लगेगा।

दूसरे वर्ग में, यमन जनवादी प्रजातांत्रिक गणतंत्र के यमनी समाजवादी दल (वाई. एस. पी.) को रखा जा सकता है। सन १९७८ में यह दल अस्तित्व में आया। सिर्फ दो वर्ष के अंदर उसके सचिव अली नासिर मुहम्मद ने अपनी स्थिति इतनी मजबूत कर ली कि सरकार कोई भी निर्णय बिना उनसे परामर्श किये नहीं ले सकती- वह चाहे प्रशासनिक मामला हो या सैनिक। उन्होंने अपने दल का संगठनात्मक ढांचा एकदम रूसी ढर्रे पर तैयार किया है। देश में कोई समुदाय नहीं है, जिसका समर्थन उन्हें प्राप्त न हो।

तीसरा वर्ग माओवादियों का है। जब तक माओत्से तुंग जीवित थे, तब तक ऐसे साम्यवादियों का अस्तित्व अन्य देशों के समान कुछ अरब देशों में भी था। ये एक साथ माओवादी चीन के भी समर्थक थे और लेनिनवादी रूस के भी। माओ के देहान्त के बाद चीन में भी पूर्ण माओवाद पनप नहीं सका। फिर, अरब देशों में कैसे पनपता? ऐसे देशों में मिस्र सोमालिया, ओमान आदि आते हैं।

चौथा वर्ग ऐसे लोगों का है, जिन्हे सही अर्थ में दल न कहकर 'समूह' कहा जाना चाहिये। इनका रवैया मात्र मार्क्सवादियों जैसा है। उनमें से कुछ एक ऐसे मार्ग की तलाश में हैं जिसमें इस्लाम और समाजवाद दोनों का समन्वय हो। जैसे लोगों के कार्यकलापों में तुर्की, ईरान, अल्जीरिया, लीबिया, जार्डन, कुवैत आदि देशों में तेजी से वृद्धि हुई है। इन समूहों में शामिल साम्यवादियों का फिलिस्तीनी मुक्ति संगठन से काफी गहरा सम्बन्ध है। यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

जो भी हो, अरब देशों के साम्यवादियों का भविष्य उन देशों की शासन प्रणाली पर निर्भर है। यह ध्यान देने की बात है कि कट्टर इस्लामपंथी और रूढ़िवादी एक-दूसरे से विकट प्रतियोगी हैं। इन दोनों दलों की अपनी

अपनी जगह पर स्थि
किंतु निश्चित रूप से
लगाया ज सकता -कि
को पीछे ढकेल देगा। सा
ही कोई सरगर हल नि
किंतु रूस्व की गंभाई

-शा